गुरु नानक - सबद १०३
चउथै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा बिरधि भइआ तनु खीणु ॥
रागु सिरीरागु, गुरु नानक, गुरु ग्रंथ साहिब, ७६

चउथै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा बिरधि भइआ तनु खीणु ॥
अखी अंधु न दीसई वणजारिआ मित्रा कंनी सुणै न वैण ॥
अखी अंधु जीभ रसु नाही रहे पराकउ ताणा ॥
गुण अंतरि नाही किउ सुखु पावै मनमुख आवण जाणा ॥
खड़ु पकी कुड़ि भजै बिनसै आइ चलै किआ माणु ॥
कहु नानक प्राणी चउथै पहरै गुरमुखि सबदु पछाणु ॥४॥

सार: समय की अनिवार्य प्रकृति हमें इसके गहरे महत्व को समझने के लिए प्रेरित करती है सिर्फ़ एक सीधी रेखीय दृष्टि से आगे बढ़कर। समय सिर्फ़ एक बाहरी शक्ति नहीं है, यह गति, परिवर्तन और क्षय के माध्यम से ब्रह्मांड में लगातार होने वाले बदलावों को मापता है। इसे पहचानने से हमारा नज़रिया बदलता है, जिससे हम समय को अपने अनुभवों के प्रतिबिंब के रूप में देख पाते हैं, न कि ऐसी चीज़ के रूप में जो हम पर राज कर, हमें नियंत्रित करती है। अतीत और भविष्य की धारणाएँ अपना महत्त्व खो देती हैं, यह इस सच्चाई को बताता है कि केवल वर्तमान क्षण ही मौजूद है। समय से लड़ने के बजाय, हम इसे अपनाना सीख सकते हैं जिससे जीवन के साथ हमारा रिश्ता शांत, संतोषजनक और अधिक जागरूक बन सकता है।

चउथै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा बिरधि भइआ तनु खीणु ॥
रात के चौथे पहर में, हे ‘व्यापारी मित्र’, बुढ़ापा पास आता है और शरीर कमज़ोर हो जाता है। ‘व्यापारी मित्र’ समय की अनिवार्यता का प्रतीक है जो यह दर्शाता है कि कर्म करने की संभावनाएँ अब सीमित होती जा रही हैं।

अखी अंधु न दीसई वणजारिआ मित्रा कंनी सुणै न वैण ॥
आँखों से दिखाई नहीं देता, हे 'व्यापारी मित्र', और कान आवाज़ की कंपन नहीं सुन पाते। यह दर्शाता है कि बाहरी जगत के माध्यम से स्वयं को पहचानने पर निर्भरता जीवन के सार को ढक देती है।

अखी अंधु जीभ रसु नाही रहे पराकउ ताणा ॥
आँखों की रोशनी कम हो जाती है, स्वाद फीका पड़ जाता है और जीवन शक्ति नहीं रहती। यह उन भ्रमों के हटने का प्रतीक है जिन्होंने कभी सुख और कामना को जगाया था।

गुण अंतरि नाही किउ सुखु पावै मनमुख आवण जाणा ॥
भीतर गुणों के अभाव में शांति कैसे मिले, जब स्वार्थी मन उन्नति-पिछड़ेपन के चक्र में उलझा रहता है? यह बताता है कि अस्थिर और आवेगपूर्ण मन को सच्चा सुख प्राप्त नहीं होता।

खड़ु पकी कुड़ि भजै बिनसै आइ चलै किआ माणु ॥
जब फसल पक जाती है तो वह झुकती है, टूटती है और अंततः नष्ट हो जाती है। फिर जो आता-जाता है, उस पर अभिमान किस बात का? यह सत्य देह के अहंकार और गर्व की व्यर्थता को उजागर करता है जो अंततः तत्वों में विलीन हो जाती है।

कहु नानक प्राणी चउथै पहरै गुरमुखि सबदु पछाणु ॥४॥
नानक कहते हैं कि जीवन की अंतिम अवस्था में वही प्राणी, जो गुरमुख होता है, ज्ञान के शब्द को पहचानता है। यह स्मरण कराता है कि शारीरिक क्षय के बीच भी यदि चेतना को विवेक से जोड़ा जाए तब स्थायी शांति प्राप्त की जा सकती है। (४)

तत्त्व: गुरु नानक जीवन के अंतिम अध्याय को पकी हुई फसल से तुलना करते हैं, जो हमारे दुर्बल होते शरीर और मंद पड़ती इंद्रियों का प्रतीक है। यह आत्म-मंथन का क्षण है, जहाँ हम दूसरों से नहीं, स्वयं से साक्षात्कार करते हैं। मनमुख (आवेगपूर्ण मन) और गुरमुख (प्रबुद्ध मन) के बीच का अंतर यहाँ स्पष्ट हो जाता है। शरीर भले ही सूखे डंठल की तरह झुकने लगे, पर समग्रता से जुड़ी हमारी चेतना अटूट रह सकती है। अहंकार भले ही ढल जाए, प्रेम और समझ तब भी फल-

फूल सकते हैं। सशक्त संदेश यह है कि जीवन के अंतिम क्षणों में भी जागृत होने की संभावना बनी रहती है।

सबद व्याख्या **विनइंदर कौर** और **अमरदीप सिंह**

Oneness In Diversity Research Foundation

वेबसाइट: OnenessInDiversity.com

ईमेल: onenessindiversityfoundation@gmail.com